□□□□□□□□□ □□□□□□

जनसत्ता 7 अगस्त, 2014 : संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित सिविल सेवा परीक्षा के विवाद की जड़ में

अनुवाद की खामियां विशेष रूप से उजागर हुई हैं। जिस परीक्षा के माध्यम से आप देश की सबसे बड़ी नौकरी के लिए लाखों मेधावी नौजवानों के बीच से चुनाव कर रहे हों और उसका परचा ऐसी भाषा में आए जिसे न हिंदी वाले समझ पाएं न अंगरेजी वाले, तो इसे देश का दुर्भाग्य नहीं मानें तो क्या मानें। आजादी के तुरंत बाद के दशकों में एक अधिनियम के तहत यह फैसला किया गया कि अंगरेजी अगले पंद्रह वर्षों तक चलती रहेगी और इन वर्षों में हिंदी समेत भारतीय भाषाओं में ऐसा साहित्य अनूदित किया जाएगा या मौलिक रूप से लिखा जाएगा जिससे कि उसके बाद भारतीय भाषाओं में काम किया जा सके। लेकिन हुआ उलटा।

शुरू के दो-तीन दशक तक तो राजभाषा और अनुवाद के काम में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष वे लोग भी लगे जो जाने-माने साहित्यकार थे, जैसे बच्चन, दिनकर, बालकृष्ण राव, अज्ञेय आदि। खुद प्रेमचंद ने अंगरेजी की कई किताबों के अनुवाद किए जिनमें जवाहरलाल नेहरू की प्रसिद्ध पुस्तक 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' भी शामिल है। अनुवाद को इन सभी ने उतना ही महत्त्वपूर्ण माना जितना कि मौलिक लेखन को, और यही कारण है कि उन दिनों के किसी अनुवाद को पढ़ कर कभी लगता नहीं कि आप मूल कृति पढ़ रहे हैं या अनुवाद।

पिछले बीस-तीस वर्षों से ऐसा अनुवाद सामने आ रहा है कि उसे पढ़ने के बजाय आप मूल भाषा में पढ़ना बेहतर समझते हैं। सरकार द्वारा जारी परिपत्रों में तो बार-बार यह कहा ही जाता है कि जहां भी समझने में शक-शुबहा हो, अंगरेजी को प्रामाणिक माना जाए। नतीजा धीरे-धीरे यह हुआ कि सरकारी अनुवाद इतनी लापरवाही से होने लगा जिसका प्रमाण हाल ही में सी-सैट की परीक्षा से उजागर हुआ है, जहां 'कॉनफिडेंस बिल्डिंग' का अनुवाद 'विश्वास भवन' और 'लैंड रिफॉर्म' का 'आर्थिक सुधार' किया गया है। और जो भाषा इस्तेमाल की गई है उसे गूगल या कंप्यूटर भले ही समझ ले, कोई हाड़-मांस का आदमी नहीं समझ सकता। यह प्रश्न और भी महत्त्वपूर्ण इसलिए हो जाता है कि जब आप परीक्षा भवन में बैठे होते हैं तो आपके पास अटकलें लगाने या मूल प्रश्न से भटकने का समय नहीं होता। संघ लोक सेवा आयोग के एक पूर्व अधिकारी ने बातचीत के बाद जब यह समस्या स्वीकार करते हुए कहा कि आखिर अच्छे अनुवादक कहां से लाएं तो लगा कि इस समस्या पर पूरे समाज और सरकार को विचार करने की जरूरत है।

सबसे पहली खामी तो शायद अनुवादक या हिंदी अधिकारी की भर्ती प्रक्रिया की है। भर्ती-नियम कहते हैं कि हिंदी अधिकारी या अनुवादक बनने के लिए हिंदी, संस्कृत या अंगरेजी भाषा में एमए होना चाहिए और डिग्री स्तर पर दूसरी भाषा। बात ऊपर से देखने पर ठीक लगती है, लेकिन सारा कबाड़ा इसी नीति ने किया है। कम से कम हिंदी पट्टी के विश्वविद्यालयों से जिन्होंने हिंदी में एमए किया है वे सूर, कबीर, तुलसीदास, जायसी को तो जानते-समझते हैं, भाषाओं, बदलते विश्व के आधुनिक ज्ञान, मुहावरों को नहीं समझते, जिनमें रोजाना के जीवन, राजनीति और समाज की जटिलताएं झलकती हैं। इसके दोषी वे नहीं हैं, बल्कि वह पाठ्यक्रम है जिसकी इतिहास, राजनीति शास्त्र, भूगोल या विज्ञान के विषयों में कभी आवाजाही रही ही नहीं।

बेरोजगारी के इस दौर में भी जितनी आसानी से प्रवेश हिंदी अधिकारी या अनुवादक की नौकरी में होता है, उतनी आसानी से देश की किसी दूसरी नौकरी में नहीं। नौकरी में आने के बाद इन्हें फिर शायद ही अच्छे अनुवाद या सरल भाषा में अपनी बात कहने का कोई विधिवत शिक्षण-प्रशिक्षण नियमित अंतराल से दिया जाता हो। इसीलिए आपने अधिकतर मामलों में देखा होगा कि इनके अनुवाद की भाषा कठिन, बोझिल, ज्यादातर मामलों में संस्कृत के शब्दों से लदी हुई या ऐसी टकसाली होती है जिसका बोलचाल की भाषा से दूर-दूर तक कोई संबंध ही नहीं होता।

उर्दू या बोलचाल की हिंदुस्तानी से दूरी भी इसमें एक प्रमुख भूमिका निभाती है। पुरानी पीढ़ी के संस्कृत के मारे प्रशिक्षक राजभाषा के नाम पर ऐसा करने पर इनकी और पीठ थपथपाते हैं। इस कमी को पूरा किया जा सकता है बशर्ते कि आप लगातार उस साहित्य और पत्रिकाओं के संपर्क में रहें। पिछले कई दशकों के अनुभव के बाद कहा जा सकता है कि सरकार के हिंदी विभागों में काम करने वाले ज्यादातर कर्मचारी नौकरी में आने के बाद पढ़ने-लिखने से शायद ही कोई संबंध रखते हों और यही कारण है कि धीरे-धीरे उनके पास शब्द भंडार और सरल शब्दों का क्षय होता जाता है।

सवाल उठता है कि आखिर वे हिंदी की किताब क्यों पढ़ें और क्यों अपनी भाषा को सरल, बोधगम्य, पठनीय बनाएं? पहले तो उनको सरकारी मशीनरी का हर विभाग देखता ही ऐसे नजरिए से है कि जैसे वे किसी दूसरे ग्रह के प्राणी हों। जिन सरकारी बाबुओं को दूर-दूर तक अंगरेजी नहीं आती वे भी हिंदी विभाग में काम करने वालों को एक अस्पृश्य नजरिए से देखते हैं।

यानी ऐसा विभाग जो खुशामद करते हुए काम कराता हो, सितंबर के महीने में जो उपहार बांट कर भी जुटाता हो- क्या उसके आला अफसरों ने भी इस ओर कभी ध्यान दिया, कभी अनुवाद को बेहतर करने की सोची। और क्या दिल्ली के सरकारी कार्यालयों में काम करने वाले ये तथाकथित अंगरेजीदां छोटे-छोटे काम, आवेदनों के जवाब, टिप्पण आदि हिंदी में नहीं कर सकते? साठ वर्ष के बाद या राजभाषा अधिनियम की पंद्रह वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद क्या हमें हिंदी में काम करने के योग्य नहीं हो जाना चाहिए था?

इसीलिए एक शीघ्र उपाय अनुवादकों की गुणवत्ता बेहतर करने का यह है कि उनकी भर्ती के नियम बदले जाएं। हिंदी अनुवादकों की भर्ती एक परीक्षा के माध्यम से होती है और जब प्रतियोगी परीक्षा ले ही रहे हैं तो उसमें किसी भी विषय में डिग्री या स्नातकोत्तर ही पर्याप्त माना जाए। किसी भाषा विशेष में स्नातक या स्नातकोत्तर होना नहीं। क्या सिविल सेवा परीक्षा समेत कर्मचारी चयन आयोग, बैंक आदि की ज्यादातर परीक्षाओं में केवल ग्रेजुएट डिग्री पर्याप्त नहीं मानी जाती? इससे भाषा-ज्ञान रखने वाले वे भी चुने जा सकते हैं जिन्होंने हिंदी माध्यम से राजनीतिशास्त्र, इतिहास या विज्ञान विषयक कोई भी पढ़ाई पूरी की है। इसका उलटा भी कि अंगरेजी माध्यम से पढ़े जाने वाले वे नौजवान भी इसमें चुने जा सकते हैं जिनकी मातृभाषा हिंदी रही हो। भाषाओं से इतर योग्यता रखने वालों को विषयों का बेहतर ज्ञान होने के कारण अनुवाद में वे गलतियां नहीं आएंगी, जो संघ लोकसेवा आयोग की सीसैट परीक्षा से उजागर हुई हैं।

दूसरे भारतीय भाषा भाषी हिंदी अनुवादकों में शामिल हो पाएं तो सबसे अच्छा रहे। उन्हें परीक्षा में रियायत देकर भी राजभाषा विभागों में नौकरी देनी चाहिए। इससे वह पाप भी धुलेगा, जो हिंदी भाषियों ने त्रिभाषा सूत्र को धोखा देकर दक्षिण की कोई भाषा न सीख कर किया है। क्या भारतीय भाषाओं की एकता राष्ट्रीय एकता के समतुल्य नहीं है।

अनुवाद की चक्कियों के बीच पिसते राजभाषा हिंदी के कर्मचारियों को शायद ही कभी समकालीन साहित्य पढ़ने की फुरसत मिलती हो। एक पुस्तक चयन समिति के दौरान कुछ विवाद बढ़ने पर एक हिंदी अधिकारी ने सफाई दी 'मुझे क्या पता कौन-सी किताब अच्छी है या बुरी। मैंने तो पिछले पंद्रह साल से कोई नई किताब नहीं पढ़ी। अनुवाद से फुरसत मिले तब न।' आश्चर्यजनक पक्ष यह है कि ऐसे अधिकारी न पढ़ने के बावजूद आखिर पुस्तक चयन समिति में

क्यों बने रहना चाहते हैं?

□कऔर अधकिारी का दर्द उभर कर सामने आया□ पहले तो अनुवाद से फुरसत नहीं मलिती, उसकेबाद संसदीय समतियिों केसाठ-सत्तर पेजों केब्योरे, फॉर्म, अनुलग्नक, प्रपत्र□ कतिने कंप्यूटर खरीदे ग□, उसमें कतिने द्वभिाषी थे? कतिने कर्मचारी हैं, कतिनों को प्रबोध, प्रवीण का ज्ञान है, कतिने पत्र 'क' क्षेत्र को ग□, कतिने 'ख' क्षेत्र को और कतिने वज्ञिापन अंगरेजी में ग□, कतिने दूसरी क्षेत्रीय भाषाओं में? और फरि उन्हें लगातार यह डर रहता है कसिंसदीय समतिि इन आंक□ों को जो□ कर देखने पर कोई गलती न नकिाल दे□ यानी कउिन्हें राजभाषा का गणति और समतियिों को खुश रखने का बीजगणति तो सखिाया जाता है, भाषा को सहज, लोकप्रयि बनाने का बुनयिादी पक्ष नहीं□

कुछ व्यक्तगित अनुभवों का जक्रि करना भी जरूरी लगता है□ वर्ष 1979 की सवििलि सेवा परीक्षा समेत कई प्रतयिोगी परीक्षाओं की तैयारी केक्रम में मैंने □कबैंकमें □कहदिी अधकिारी पद केलपि□ भी आवेदन कर दयिा, और लखिति में पास भी हो गया□ साक्षात्कार केसमय उन्होंने पेच लगाया कआिप हदिी में स्नातकोत्तर तो हैं, लेकनि बी□ में आपकेपास वज्ञिान था- न हदिी थी न अंगरेजी□ मैंने समझाने की कोशशि भी की कबिी□ससी अंगरेजी माध्यम में था, जसि अंगरेजी के□कवषिय से बेहतर नहीं तो बराबर माना जा सकता है□ लेकनि वे संतुष्ट नहीं हु□, क्योंकउिनकेभर्ती-नयिमों में यह महत्त्वपूर्ण नहीं है ककितिना कसिी को अनुवाद और भाषा का कतिना ज्ञान है, महत्त्वपूर्ण यह है कआिवेदकने उन वषियों में डग्रिी ली है या नहीं□

□कदशकपहले मंत्रालय में नदिशक, राजभाषा केपद पर प्रतनियिुक्त सिे आवेदन मांगे ग□ थे□ □कआवेदनकर्ता वज्ञिान और हदिी दोनों में स्नातकोत्तर था□ लेकनि उसे साक्षात्कार केलपि□ इसलपि□ नहीं बुलाया गया कडिग्रिी स्तर केवषियों में हदिी या अंगरेजी का उल्लेख नहीं है□ क्या अंगरेजी माध्यम से वज्ञिान प□ना अंगरेजी वषिय की पूर्ता नहीं करता? इन नयिमों में अपेक्षति परवर्ितन कयिा जा□ तो वज्ञिान या हदिीतर दूसरे वषियों को प□ कर आने वाले मौजूदा अनुवादकों से कहीं अच्छे साबति होंगे□

आखरिी बात कअिनुवाद केसहारे कब तक? कम से कम दल्लिी स्थति केंद्र सरकार केपंचानबे प्रतशित कर्मचारी-अधकिारी हदिी जानते हैं□ संसदीय समतियिां भी यहीं हैं और राजभाषा केसर्वोच्च कार्यालय भी□ क्यों ये अपनी बात फाइलों पर अपनी भाषा में कहने में हचिकते हैं□ इसकी शुरुआत शीर्ष अधकिारयिों से करनी होगी□ हदिी माध्यम से चुने ग□ अधकिारयिों का तो यह थो□ा-बहुत नैतकि दायत्वि बनता ही है कजिसि भाषा केबूते वे इन प्रतष्ठिति सेवाओं में आ□ हैं, उसमें कुछ काम भी कयिा जा□ और राजभाषा वभिाग का बोझ कुछ हल्का करें□ पर कई बार ये दूसरों से बेहतर अंगरेजी लखिने की दौ□ में शामलि हो जाते हैं□ इसका प्रमाण मलिा दक्षणि भारत के□कसरकारी कार्यालय में□ हदिी प्रेमी दक्षणि भारतीयों का कहना था कयिहां उत्तर प्रदेश, बहिार से ब□ी संख्या में अधकिारी तैनात हैं□ हम चाहते थे कइिनकेसाथ रह कर हमारी हदिी ठीकहो जा□गी, क्योंकहिमें भी दल्लिी या दूसरे हदिी क्षेत्रों में जाना होता है□ उन्होंने अफसोस केसाथ बताया कउित्तर केये अधकिारी तो अंगरेजी सुधारने में लगे रहते हैं□

सीसैट ववािद ने अनुवाद की खामयिों की ओर पूरे देश का ध्यान खींचा है, लेकनि अगर हम इस समस्या का समाधान चाहते हैं तो हमें भर्ती-नयिमों और योग्यता आदकिेप्रावधानों में तुरंत बदलाव करने होंगे□ जहां तकस्थायी समाधान का प्रश्न है, जब तकस्कूल-कॉलेजों में शक्षिा अपनी भाषाओं में नहीं दी जा□गी, इस समस्या का पूरा हल संभव नहीं होगा□

फेसबुक पेज को लाइक करने के लिए क्लिक करें- https://www.facebook.com/Jansatta

ट्विटर पेज पर फॉलो करने के लिए क्लिक करें- https://twitter.com/Jansatta